ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.21, No2, April – June, 2026/164

अभिराज राजेन्द्र मिश्र कृत 'प्रशान्तराघवम्' नाटक में छन्दोयोजना

अनामिका पाण्डेय एवं पवन कुमार गुप्ता

https://doi.org/ 10.61410/had.v21i2.288

शोध–सारांश

प्रस्तुत शोध–आलेख में अभिराज राजेन्द्र मिश्र कृत नाटक 'प्रशान्तराघवम्' की छन्द–योजना का विश्लेषण किया गया है। इस अध्ययन में नाटक में प्रयुक्त विभिन्न छन्दों– शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, वसन्ततिलका, अनुष्टुप, हरिणी, शिखरिणी, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, द्रुतविलम्बित तथा गीतिछन्द का स्वरूप, लक्षण एवं प्रयोग–प्रसंगों का विवेचन किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि कवि ने छन्दों का चयन केवल छन्दशास्त्रीय सौन्दर्य के आधार पर ही नहीं किया, बल्कि रस–निष्पत्ति, भावाभिव्यक्ति एवं नाटकीय प्रभाव को सशक्त बनाने के लिए भी किया है। विविध छन्दों के माध्यम से नाटक में गेयता, नाटकीयता तथा भाव–गहनता का समन्वय दिखाई देता है। अतः प्रशान्तराघवम् की छन्द–योजना इसे एक समृद्ध और शास्त्रीय दृष्टि से सुदृढ़ नाट्यकृति के रूप में स्थापित करती है।

शब्द–संकेत– प्रशान्तराघवम्, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, छन्द–योजना, शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, वसन्ततिलका, अनुष्टुप, संस्कृत नाटक, छन्दशास्त्र, गीतिछन्द, नाट्य सौन्दर्य।

डॉ. अभिराज राजेन्द्र मिश्र रस में परिपूर्ण कवि हैं। उन्होंने अपने नाटक प्रशान्तराघव में रुचि के अनुरूप छन्दों का प्रयोग किया। इस नाटक में किन–किन नाटकों का प्रयोग किया गया, इसका विवरण संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है–

शार्दुलविक्रीडितम्–

इस श्लोक की विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

''सूर्याश्वैर्यदि मः सजौसततगाः, शार्दूविक्रीडितम्।''

अर्थात् जहाँ एक श्लोक में चार पाद होते हैं। प्रत्येक श्लोक में 12, 7 अक्षरों में एक यति है। प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण तथा गुरु होते हैं, ऐसे छन्द को शार्दुलविक्रीडित छन्द कहते हैं। प्रशान्तराघवम् नाटक में इसका प्रयोग द्रष्टव्य है–?

म	स	ज	स	त	त	गु
ऽऽऽ	।।ऽ	।ऽ।	।।ऽ	ऽऽ।	ऽऽ।	ऽ

''दीप्यच्छम्भुकपर्दसान्द्रसरणिस्तोमभ्रमन्त्योत्कया
सापत्न्यप्रदहद्विधा कुटिलया दृष्टा चिरं गङ्गया।
फूत्कारैः फणिभिर्मुधा तरलिता मातङ्गकृत्त्याऽऽकुला
गौरी शम्भुसमागमप्रशिथिला दोलायिता पातु वः।।''[1]

समीक्षा

शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग प्रायः स्तोत्रों में प्रयोग किया जाता है। अतः छंद की प्रकृति को जानकर कवि ने अपने नाटक के मंगलाचरण में गौरी और पार्वती की स्तुति में इस छन्द का प्रयोग किया है।

इस श्लोक का प्रयोग प्रशान्तराघव में अन्यत्र बताया गया है, जहाँ श्लोकों की संख्या केवल औपचारिक संकेत द्वारा बताई गई है।

प्रथम अंक के श्लोक संख्या 2,12,13,19, 1 तथा 45 वें पृष्ठ का पाँचवाँ छठवाँ श्लोक, 47वें पृष्ठ का 9वाँ श्लोक, 66वें पृष्ठ का 5वाँ श्लोक, 72वें पृष्ठ का 13वाँ श्लोक, 73वें पृष्ठ का प्रथम श्लोक, 74वें पृष्ठ का

- **शोध निर्देशक– आचार्य : संस्कृत विभाग, बी.बी.डी. पी.जी. कॉलेज, परुइया आश्रम, अम्बेडकरनगर।**
- **शोध छात्रा– संस्कृत विभाग, बी.बी.डी. पी.जी. कॉलेज, परुइया आश्रम, अम्बेडकरनगर।**

चौथा श्लोक, 86वें पृष्ठ का 10वाँ श्लोक, 89वें पृष्ठ का छठां श्लोक, 94वें पृष्ठ का 22 व 23वाँ श्लोक। इन सभी श्लोकों में शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग हुआ है।

स्रग्धरा छन्द

इस छन्द की विशेषताएं इस प्रकार हैं–

म	र	भ	न	य	य	य
SSS	S।S	S।।	।।।	।SS	।SS	।SS

म्रभ्नैर्यानां त्रयेय त्रिमुनि यति युता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।

अर्थात् जहाँ सात–सात पदों पर तीन बार यति बनता है। श्लोक में चार पाद होते हैं। प्रत्येक पाद में क्रम से मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, यगण, यगण, गण वर्ण होते हैं, उस छन्द को स्रग्धरा छन्द कहते हैं।

प्रशान्तराघव नाटक में स्रग्धरा छन्द का प्रयोग देखें–

म	र	भ	न	य	य	य
SSS	S।S	S।।	।।।	।SS	।SS	।SS

''शीर्षं विच्छेद भक्त्या स्वयमपि नवधा राधितुं यो महेशं
1,2,3,4,5,6,7=यति, 1,2,3,4,5,6,7=यति, 1,2,3,4,5,6,7=यति,
चञ्चत्काञ्छाप्रपूर्त्यै ननु दशवदनो जातु दर्पैकमूलम्।
छित्वा तं दर्पमेव त्रिनयनगृहिणीपादपद्मेऽर्पयन्सः
न्यक्चक्रे तं दशास्यं रघुपतिगृहिणीवक्त्रचन्द्रोपरागम्।।''[2]

यहाँ श्लोक में, प्रमुख और गौण वर्णों द्वारा दर्शाए गए क्रम में, मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, यगण, यगण, गण, सप्तभि, सप्तभि, सप्तभि, यति, चार अक्षर हैं, और निम्नलिखित उदाहरण में स्रग्धरा छन्द है।

प्रयोग समीक्षा

स्रग्धरा छन्द का प्रयोग वीर और रौद्र रस के स्तोत्रों में भी किया जाता है। जिस प्रकार कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तल के मंगलाचरण में भगवान शिव की स्तुति में इस श्लोक का प्रयोग किया था। बौद्ध आचार्य अक्सर अपने स्तोत्रों में स्रग्धरा छन्द का उपयोग करते थे।

यहाँ भी कवि अभिराज राजेन्द्र ने प्रशान्तराघव नाटक की भूमिका के प्रथम अंक में अपनी भक्ति भावना व्यक्त की है। अतः यहाँ श्लोक का प्रयोग उचित है। इस कविता का उपयोग इस नाटक में अन्यत्र भी हुआ है, जैसे–

प्रथम अंक का चतुर्थ एवं पंचम श्लोक, 49वें पृष्ठ पर 13–14वां श्लोक, 53वें पृष्ठ पर तृतीय एवं चतुर्थ श्लोक, 61वें पृष्ठ पर 55वां श्लोक, 82वें पृष्ठ पर पंचम श्लोक, 85वें पृष्ठ का नवम श्लोक, 91वें पृष्ठ का 13, 14, 15वाँ श्लोक, 94 पृष्ठ का 24वाँ श्लोक स्रग्धरा छन्द में निबद्धित है।

वसन्ततिलका छन्द

इस श्लोक की विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

त	भ	ज	ज	गु.गु.
SS।	S।।	।S।	।S।	SS

''उक्ता वसन्ततिलकातभजाजगौगः''

अर्थात एक छंद जिसमें चार पाद हों। प्रत्येक पाद के अंत में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण, और गुरुद्वय हैं, और उस श्लोक को वसंततिलका कहा जाता है। इस श्लोक का प्रयोग प्रशान्तराघव नाटक में इस प्रकार हैं–

त भ ज ज गु.गु.
ऽऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ऽऽ
''शं याति यावादिह पूर्वतरोऽवमान–
स्तावद्धदेत्यहह घोरतरस्तदन्यः।
झञ्झाऽकुलं ननु दिने निशि चापि सोल्कं
व्योमेव भात्याखिलजीवनमेव नृणाम्।।''[3]

इस उदाहरण–रूप लिये गये श्लोक में चार पाद हैं, इसलिए वसंततिलका छन्द का प्रयोग किया जाता है। इस छंद का प्रयोग प्रशान्तराघव के नाटक में अन्यत्र भी है। इसके 43वें पृष्ठ का चतुर्थ श्लोक, 48वें पृष्ठ का 11, 12वां श्लोक, 65वें पृष्ठ का 2रा, 3रा श्लोक, 76वें पृष्ठ का षष्ठ श्लोक, 86वें पृष्ठ का 11वां श्लोक, 88वें पृष्ठ का प्रथम, द्वितीय श्लोक, 89वें पृष्ठ का चतुर्थ श्लोक, 93वें पृष्ठ का 20वां श्लोक में वसन्ततिलका छन्द प्रयुक्त हुआ है।

अनुष्टुप छन्द

इसकी विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

।ऽऽ ।ऽ।
1,2,3,4,5,6,7,8 = 1,2,3,4,5,6,7,8
श्लोकेषष्ठं गुरुर्ज्ञेयं सर्वत्र लघुपञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं, सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।
1,2,3,4,5,6,7,8 = 1,2,3,4,5,6,7,8
।ऽऽ ।ऽ।

अर्थात जिस छंद में चार पाद होते हैं, उसके प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं। प्रत्येक पाद का पंचम वर्ण लघु, षष्ठ वर्ण गुरु होता है। पहले और तीसरे पाद में सातवाँ अक्षर गुरु और दूसरे और चौथे अक्षर में सातवाँ अक्षर लघु होता है। ऐसे छन्द को अनुष्टुप छन्द कहते हैं। प्रशान्तराघव नाटक में इसका खूब प्रयोग हुआ है. उदाहरणों में शामिल हैं–

।ऽऽ ।ऽ।
1,2,3,4,5,6,7,8 = 1,2,3,4,5,6,7,8
रङ्गभूमि समासीना निःशब्दाः खलुदर्शकाः।
।ऽऽ ।ऽ।
लक्ष्यन्ते वटशाखायां स्थिता नैशखगा इव।।
1,2,3,4,5,6,7,8 = 1,2,3,4,5,6,7,8

अर्थात् यहाँ चार पाद हैं। प्रत्येक चरण में आठ अक्षर होते हैं। चतुर्थ पाद का पाँचवाँ वर्ण लघु है, छठा गुरु है। प्रथम एवं तृतीय पाद का सप्तम वर्ण गुरु है। दूसरे एवं चौथे पाद का सप्तम वर्ण लघु है। इसलिए यह अनुष्टुप छंद हैं। प्रशान्तराघव में अनुष्टपु छंदों का उपयोग उनकी संख्या जहां निर्धारित है, यहाँ निर्दिष्ट है–

प्रथम अंक का 7, 8, 11, 18वां श्लोक, पृष्ठ 45 का 7वां श्लोक, 46 पृष्ठ का 8वां श्लोक, 47 पृष्ठ का 10वां श्लोक, 53 पृष्ठ का दूसरा श्लोक, 66 पृष्ठ का प्रथम श्लोक, 73वें पृष्ठ का द्वितीय श्लोक, 74वें पृष्ठ का तृतीय एवं पंचम श्लोक, 77 पृष्ठ का 8वां श्लोक, 78वें पृष्ठ का 9वां श्लोक, 83वें पृष्ठ का 6, 7वां श्लोक, 88वें पृष्ठ का तृतीय श्लोक, 89वें पृष्ठ का पांचवां श्लोक, 90वें पृष्ठ का 12वां श्लोक, 92वें पृष्ठ का 16, 17, 18वां श्लोक, 93वें पृष्ठ का 19, 21वां श्लोक अनुष्टुप छन्द में विरचित है।

हरिणी छन्द

इस श्लोक की विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

न	स	म	र	स	ल.गु.
।।।	।।ऽ	ऽऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	।ऽ

नसमरसलागः षड्वेदैर्हयैर्हरिणीमता।

1 2 3 4 5 6 = यति 1 2 3 4 5 6 7 = यतिः

अर्थात् जिस छंद में चार पाद हों, जिनमें से प्रत्येक में 6, 4, 7 अक्षरों पर यति हो जाता है। तथा प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, सगण, मगण, रगण, सगण और अन्त में एक लघु एवं एक गुरु होते हैं। इस प्रकार के छन्द को हरिणी छन्द कहते हैं। इसका उपयोग प्रशान्तराघव नाटक में इस प्रकार है–

न	स	म	र	स	ल.गु.
।।।	।।ऽ	ऽऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	।ऽ

''मधुरमधुरैर्वार्तारम्भैरतत्त्वमनोहरैः।

1 2 3 4 5 6 यति 1 2 3 4 यति 1 2 3 4 5 6 7 यति

र्धरणिगगन व्याप्तैः स्वीयैः प्रकल्प्यगताऽगतैः।
हृदयमनिशं प्रश्नैश्चित्रैः प्रसह्यविमोहनैः।
सखि! शबलयन्तौ तौ जातौ मदेकचित्ताश्रयौ।।''[4]

इस उदाहरण में चार पाद हैं और प्रत्येक पैर में 6, 4, 7 अक्षर हैं। तथा प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, एक लघु, एक गुरु वर्ण हैं, इसलिए यहाँ हरिणी छन्द का प्रयोग किया गया है।

हरिणी छन्द का प्रयोग विरह के रस में, मिलन के रस में, करुणा के रस में और स्नेह के रस में किया जाता है। यहाँ इस श्लोक का प्रयोग वात्सल्य रस में किया गया है और यही सही है। इसका प्रयोग प्रशान्तराघव नाटक में एक साथ देखने को मिलता है।

शिखरिणी छन्द

इसकी विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

य	म	न	स	भ	ल.गु.
।ऽऽ	ऽऽऽ	।।।	।।ऽ	ऽ।।	।ऽ

रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी

123456 यति 1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 यति

अर्थात एक छंद जिसमें चार पाद हों। प्रत्येक अक्षर में छह और ग्यारह वर्ण पर यति होते हैं और प्रत्येक अक्षर में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, और अंत में एक, एक लघु एवं गुरु गण होता है। वह छन्द शिखरिणी छन्द है।

इस श्लोक का प्रयोग विरह के आँसुओं की धारा में, करुणा में, वीरता में और आँसुओं के रस में किया जाता है। यहाँ रौद्ररस में इसका प्रयोग बताया गया है। लक्ष्मण भयानक स्वर में कहते हैं– अतः इस छन्द का प्रयोग उचित है।

य	म	न	स	भ	ल.गु.
।ऽऽ	ऽऽऽ	।।।	।।ऽ	ऽ।।	।ऽ

''अकस्माल्लङ्कायां यदपि घटितं वा विघटितं

123456 यति 1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 यति
प्रतिकारे तस्य प्रसभमुपरुढा नहि वयम्।
दशास्यभ्रातोऽसौ पवनतनयोऽयं खलुजनो,
न कोऽप्यार्थं रौद्रं शमयितुमभूद्युक्तिकुशलः।।''[5]

यहाँ श्लोक में चार पाद हैं, प्रत्येक पाद में छह या ग्यारह वर्ण पर यति है, और प्रत्येक पाद क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण और अन्त में एक–एक लघु एवं गुरु वर्ण हैं। इसलिए यहाँ शिखरिणी छन्द का प्रयोग है।

इन्द्रवज्रा छन्द, उपेन्द्रवज्रा एवं उपजाति छन्द का प्रयोग

	त	त	ज	गु.गु.
उपेन्द्रवज्रा	ऽऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽऽ

इन्द्रवज्रा स्यादेन्द्रवज्रा यति तौ जगौगः,
उपजाति उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततोगो।
अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजो,
पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।।

अर्थात जिस छंद में चार पाद होते हैं, प्रत्येक छंद में क्रमशः तगण, तगण, जगण और अन्त में दो गुरु होते हैं, उसे इन्द्रवज्रा छन्द कहते हैं।

किन्तु इस छन्द के प्रत्येक पाद का प्रथम वर्ण गुरु के बाद लघु होते हैं। इस प्रकार गणक्रम से जगण, तगण, जगण और अन्त में दो गुरु होने पर उसे उपेन्द्रवज्रा छन्द कहते हैं।

इसी प्रकार जब श्लोक के चार पादों में दो पाद इन्द्रवज्रा और दो पाद उपेन्द्रवज्रा के होते हैं तब वहाँ उपजाति छन्द होता है। अर्थात् चार पादों में एक पाद इन्द्रवज्रा या उपेन्द्रवज्रा और बाकी के तीन पर इन्द्रवज्रा या उपेन्द्रवज्रा होने पर उसे उपजाति छन्द के नाम से जाना जाता है। प्रशान्तराघव नाटक में नाटककार ने इस प्रकार के बहुत से प्रयोग किये हैं–

यह छन्द सभी रसों में प्रयुक्त किया जा सकता है। प्रशान्तराघव नाटक के तृतीय अंक में लोकसभा प्रसंग में इसका प्रयोग करुणरस एवं शान्तरस के साथ किया गया है। इस प्रकार कृतिकार ने इनका प्रयोग बहुत सुन्दर ढंग से किया है। प्रशान्तराघवम् नाटक से एक उदाहरण यहाँ दिया जा रहा है–

		त	त	ज	गु.गु.
		ऽऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽऽ

इन्द्रवज्रा सोऽहं स्वकीयैयैस्तेपसार्जवैश्च

उपेन्द्रवज्रा	स्वतेजसा चापि दृढं शमामि।				
	।ऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽऽ	
	ज	त	ज	गु.गु.	

उपेन्द्रवज्रा	यदात्मपुण्याक्षतभूरिभाग्यैः।				
	त	त	ज	गु.गु.	
	ऽऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽऽ	

इन्द्रवज्रा श्रीराघव सप्रतिनिर्दिशामि

उपर्युक्त उदाहरण में प्रथम पाद इन्द्रवज्रा, द्वितीय पाद उपेन्द्रवज्रा, तृतीयपाद पुनः उपेन्द्रवज्रा एवं चतुर्थ पाद इन्द्रवज्रा छन्द का है। इसलिए यहाँ पर दोनों के मिश्रण उपजाति छन्द निबद्ध हुआ है।

प्रशान्तराघव नाटक के तृतीय अंक में इन तीनों छन्दों का प्रयोग हुआ है। इस अंक के चौबीस श्लोक इन तीनों छन्दों में निबद्ध हुए हैं। उनका संकेत श्लोक संख्या के अनुसार इस प्रकार है– 4,5,6,7,8,9,10,11,12,13, 14,15,16,17,18,19,20,21, 22,23,24,25, 26,27,28। इस तरह कुल मिलाकर 25 श्लोकों की रचना इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा एवं उपजाति छन्द में रचित हैं।

द्रुतविलम्बित छन्द

इस छन्द के लक्षण इस प्रकार हैं–

न	भ	भ	र
।।।	ऽ।।	ऽ।।	ऽ।ऽ

द्रुतविलम्बितमाहनभौभरौ

अर्थात् इस छन्द के चार पाद हैं तथा प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, भगण, भगण, रगण होते हैं। ऐसे छन्द को द्रुतविलम्बित छन्द के नाम से अभिहित किया जाता है।

द्रुतविलम्बित छन्द का प्रयोग करुण, हास्य, श्रृंगार, वात्सल्य अर्थात् कोमल रस में किया जाता है। प्रशान्तराघव नाटक के षष्ठ अंक में वात्सल्य रस एवं सप्तम अंक के प्रणय रस में इसका प्रयोग किया गया है। कवि का प्रयोग बड़ा ही समीचीन बन पड़ा है। इसके एकाध उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

न	भ	भ	र
।।।	ऽ।।	ऽ।।	ऽ।ऽ

''तदपि नाथ! विदेहसुताऽश्रयस–,
त्वमसि केवलमत्रपरत्र च।
सुमफलप्रसवापिलताऽनघा,
त्यजति नैवतरुं दयिताश्रयम्।।''[6]

उपर्युक्त उदाहरण में छन्द के चार पाद हैं। प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, भगण, भगण, रगण गण आये हैं। इसलिए यहाँ पर द्रुतविलिम्बित छन्द प्रयुक्त हुआ है। 81वें पृष्ठ के प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं 90वें पृष्ठ के श्लोक संख्या 7, 8, 9, 10, 11 में द्रुतविलम्बित छन्द का प्रयोग किया गया है।

गीतिछन्द

संस्कृत काव्य वाङ्मय में प्राचीनकाल से ही गीतियों की रचना होती रही है। संस्कृत साहित्य में 'गीतिगोविन्दः' गीतिग्रन्थ आज भी उपलब्ध है। गीति दो प्रकार की होती हैं। प्राचीनकाल में संगीत शास्त्रीय नियमानुसार राग, ताल, लय से समन्वित गीतियों की रचनाएँ होती रहीं हैं।

किन्तु आज के आधुनिक समय में काव्य गीति रचनाओं को शास्त्रीय संगीत नियमों के अनुरूप होना अनिवार्य नहीं रह गया है। वहाँ अब गीतियों में नियमबद्धता न होकर गेयता का होती है। इसलिए आज के आधुनिक समय में गीति रचनाओं में गेयता अनिवार्य तत्त्व हो गयी है।

डॉ. अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी ने प्रशान्तराघव नाटक में गीति रचना का सुन्दर सन्निवेश किया है। नाट्याचार्यों ने नाट्यशास्त्रीय तत्त्वों में वातावरण के निर्माण हेतु नृत्य के साथ गीति तत्त्व की महत्ता को स्वीकार्य किया है। नाटक दर्शकों के मनोरंजनार्थ गीति के द्वारा रसोत्कर्ष करते हैं।

प्रशान्तराघव नाटक में अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी ने पृष्ठ 28, 29, 41, 68, 72 आदि पृष्ठों पर गीति रचनाओं का समावेश किया है। उदाहरण के लिए एक गीत प्रस्तुत है–

''महिता समुज्ज्वला ज्योत्स्ना चिल्लिका चीत्करोति च
पिकी कुहू–कुहूरावैः रौति कस्मिन्नु वासरे?
भ्रातृजाये! स्फफरेन्नेत्रद्वयं कस्मिन्नु वासरे?
गृहे–गृहे दीपदीप्ताऽयोध्या यस्मिन्नु वासरे।
प्राङ्गणं राघवः प्रागात् हन्त यन्मिन्नु वासरे!!
विपदाभाति कजरी मुदिरा रोचतेतराम्
सौम्यः कराञ्जलिर्भाति हन्त कस्मिन्नुवासरे?
ननान्दः! वल्गते स्वने हन्त कस्मिन्नु वासरे?
गायति नैव गीतानि गणयत्यपि न सौह्रदम्
निपिवन्ती शुकं सारी स्थिता यस्मिनु वासरे!!
चन्द्रः प्रतीयते नेत्रं रविर्दीपः प्रतीयते
व्यजनं प्रजायते वातो हस्त कस्मिन्नु वासरे?
भ्रातृजायेऽञ्चलं रिङ्गेद्धन्त कस्मिन्नु वासरे?
ज्येष्ठाः श्वश्रूश्च सम्भूव यस्मिन् गायन्ति वासरे
ननान्दः! जातको गृहे यस्मिन्नु वासरे!!''[7]

इस प्रकार प्रशान्तराघवम् नाटक में इस प्रकार के सार्थक, सुन्दर, रस युक्त छन्दों का प्रयोग हुआ है, जो बड़ी ही श्लाघ्य एवं महत्त्वपूर्ण है।

सन्दर्भ सूची–

1. प्रशान्तराघवम्, प्रथम अंक, मंगलाचरण, श्लोक–1, पृ. 25
2. प्रशान्तराघवम्, प्रथम अंक, श्लोक–4, पृ. 26
3. प्रशान्तराघवम्, द्वितीय अंक, श्लोक–4, पृ. 43
4. प्रशान्तराघवम्, पंचम अंक, श्लोक–10, पृ. 78
5. प्रशान्तराघवम्, प्रथम अंक, श्लोक–9, पृ. 30
6. प्रशान्तराघवम्, सप्तम अंक, श्लोक–11, पृ. 90
7. प्रशान्तराघवम्, प्रथम अंक, श्लोक–6, पृ. 28–29

प्रो. पवन कुमार गुप्ता (आचार्य) Email-
अनामिका पाण्डेय (शोधार्थी) Email